

- (३) परमं लाभमरातिभङ्गमाहुः (१३-१२)-शत्रु-नाश सबसे बड़ा लाभ है।
- (४) नयहीनादपरज्यते जनः (२-४९)-नीतिहीन राजा से प्रजा प्रसन्न नहीं रहती।
- (५) सदाऽनुकूलेषु हि कुर्वते रतिं नृपेष्वमात्येषु च सर्वसम्पदः (१-५) राजा और मन्त्री के अनुकूल होने पर ही सब सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं।
- (६) व्रजन्ति शत्रून्वधूय निःस्पृहाः शमेन सिद्धिं मुनयो न भूभृतः (१-४२)-शत्रुओं की उपेक्षा करके मुनि ही शान्ति लाभ कर सकते हैं, राजा नहीं।

कुछ अन्य सुन्दर सुभाषित ये हैं :-

- (१) हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः (१-४)
- (२) समुन्नयन् भूतिमनार्यसंगमाद् वरं विरोधोऽपि समं महात्मभिः (१-८) नीचों की संगति की अपेक्षा महात्माओं से विरोध भी अच्छा है, क्योंकि वह ऐश्वर्य का साधक है।
- (३) अहो दुरन्ता बलवद्विरोधिता (१-२३)-बलवान् से विरोध दुःखदायी है।
- (४) वसन्ति हि प्रेमिणि गुणा न वस्तुनि (८-३७)-प्रेम में गुण बसते हैं, न कि वस्तु में।
- (५) मित्र-लाभमनु लाभसम्पदः (१३-५२) सबसे बड़ा लाभ मित्र-लाभ है।
- (६) विमलं कलुषीभवच्च चेतः कथयत्येव हितषिणं रिपुं वा (१३-६)
- (७) अविज्ञातेऽपि बन्धौ हि बलात् प्रह्लादते मनः (११-८)
- (८) आपातरम्या विषयाः पर्यन्तपरितापिनः (११-१२)
- (९) कामाः कष्टा हि शत्रवः (११-३५)
- (१०) सुलमा रम्यता लोके दुर्लभं हि गुणार्जनम् (११-११)
- (११) गुरुतां नयन्ति हि गुणा न संहति (१२-१०)
- (१२) पुरुषस्तावदेवासौ यावन्मानान्न हीयते (११-६१)

- (१३) अवन्ध्यकोपस्य विहन्तुरापदां भवन्ति वश्याः स्वयमेव देहिनः (१-३३)
 (१४) ज्वलितं न हिरण्यरेतसं चयमास्कन्दति भस्मनां जनः (२-२०) ।
 (१५) शरदभ्रचलाचलेन्द्रियैरसुरक्षा हि बहुच्छलाः श्रियः (२-३९)
 (१६) मुखरताऽवसरे हि विराजते (५-१६)
 (१७) न रम्यमाहार्यमपेक्षते गुणम् (४-२३)
 (१८) रम्याणां विकृतिरपि श्रियं तनोति (७-५)
 (१९) भवन्ति मव्येषु हि पक्षपाताः (३-१२)
 (२०) भवन्ति गोमायुसखा न दन्तिनः (१४-२२)
 (२१) न मानिता चास्ति भवन्ति च श्रियः (१४-१३)
 (२२) गुणगृह्या वचने विपश्चितः (२-५)
 (२३) सहसा विदधीत न क्रियामविवेकः परमापदां पदम् ।

वृणुते हि विमृश्यकारिणं गुणलुब्धाः स्वयमेव सम्पदः (२-३०)

(च) वर्णन-वैचित्र्य-

भारवि विविध विषयों के वर्णन में सिद्धहस्त है। उसके प्रकृति-वर्णन, मनोभाव-वर्णन, अन्तःप्रकृति और बाह्य प्रकृति का समन्वय युद्ध-वर्णन, जलविहार-वर्णन, ऋतु-वर्णन, सुरत-वर्णन, सैन्य-वर्णन आदि अत्यन्त मनोहर हैं। जैसे—सर्ग ४ में शरद्-वर्णन, सर्ग ५ में हिमालय-वर्णन, सर्ग ८ में जलक्रीडा-वर्णन, सर्ग ९ में संध्या, चन्द्रोदय और सुरत-वर्णन, सर्ग १२ से १८ तक युद्ध-वर्णन।

वसन्त-वर्णन में क्या ही सुन्दर रूप में कवि ने श्रृंगार और वीर रसों को एक स्थान पर बैठाया है। इसमें रूपक और उत्प्रेक्षा अलंकारों का भी सुन्दर समन्वय है। विकसितकुसुमाधरं हसन्तीं कुरबकराजिवधूं विलोकयन्तम् ।

ददृशुरिव सुराङ्गना निषण्णं सशरमनङ्गमशोकपल्लवेषु ॥ (१०-३२)

अप्सराएँ मानो यह दृश्य देख रही हैं कि अशोक के पत्तों पर कामदेव अपना बाण लिए बैठा है और वह विकसित पुष्परूपी अधरों से हँसती हुई कुरबकपुष्प राशिरूपी वधू को देख रहा है। एक ओर काम की कामुकता है तो दूसरी ओर वधुओं पर काम-बाण-निक्षेप। क्या ही रसों का सांकर्य है!

(छ) छन्दोयोजना-

छन्दोयोजना पर विचार करने से ज्ञात होता है कि भारवि छन्दःप्रयोग की दृष्टि से कालिदास से आगे है। कालिदास के विशेष प्रयुक्त छन्द ६ है - उपजाति, अनुष्टुप, वंशस्थ, रथोद्धता, वैतालीय और द्रुतविलम्बिता। भारवि ने विभिन्न सर्गों में ११ छन्दों का प्रयोग किया है और सर्गान्त छंदों में मालिनी और वसन्ततिलका प्रमुख हैं। इस प्रकार ज्ञात होता है कि छन्दोवैशिष्ट्य क्रमशः उन्नति पर था। भारवि के प्रयुक्त मुख्य छन्द १३ हैं। माघ ने और आगे बढ़कर १६ छन्दों का प्रयोग किया है। भारवि का अत्यन्त प्रिय छन्द वंशस्थ है।

अतएव क्षेमेन्द्र ने भारवि की प्रशंसा में कहा है कि उसने वंशस्थ छन्द के द्वारा वंशस्थ गोल छाते से छाया के तुल्य अपनी प्रतिभा का अधिक विस्तार किया है।

वृत्तछत्रस्य सा काऽपि वंशस्थस्य विचित्रता।

प्रतिमा भारवेर्येन सच्छायेनाधिकीकृता ॥

किरातार्जुनीय की परीक्षा से ज्ञात होता है कि भारवि ने ८ वर्ण से लेकर १३ वर्ण तक के छन्दों पर पूर्णाधिकार प्राप्त किया था। अतएव वसन्ततिलका (१४ वर्ण) और मालिनी (१५ वर्ण) का सर्गान्त में ही प्रयोग किया है।

भारवि के प्रयुक्त छन्दों का विवरण इस प्रकार है :

छन्दों के नाम सर्ग में प्रयुक्त

(१) वंशस्थ-१, ४, ८, १४

(२) उपजाति-३, १६, १७

(३) द्रुतविलम्बित-५, १८

(४) अनुष्टुप्-११, १५

(५) वियोगिनी-२

(६) प्रमिताक्षरा-६

(७) प्रहर्षिणी-७

(८) स्वागता-६

(९) पुष्पिताग्रा-१०

(१०) उद्गाता-१२

(११) औपच्छन्दसिक-१३

छन्दों के नाम सर्गांत में प्रयुक्त

(१) मालिनी- १, ३, ४, ५, ६, ९, १४,

(२) बसन्ततिलका-२, ७, ८, ११, १३, १५, १६, (७)

(३) प्रहर्षिणी- १२ (१) -

(४) शिखरिणी- १० (१)

(५) भारवि को न्यूनताएँ

पाश्चात्य तथा कतिपय भारतीय विद्वानों ने भारवि की कुछ न्यूनताओं का उल्लेख किया है। वे ये हैं :-

(१) १५वें सर्ग में चित्रालंकारों का प्रयोग । श्रमसाध्यता और दुर्बोधता के कारण कीथ आदि ने इस पद्धति की कटु मालोचना की है।

(२) लिट् लकार का कर्मवाच्य और भाववाच्य में अधिक प्रयोग।

(३) कतिपय शब्दों, धातुओं और पदावली की पुनरावृत्ति ।

(४) क्लिष्ट वैयाकरण-प्रयोग। जैसे-शास् का द्विकर्मक प्रयोग, अनुजीविसात्कृताः (१-१४) में देये त्रा च(५-४-५५) से सात प्रत्यय, दर्शयते (१-१०) में प्रात्मनेपद का प्रयोग, स्तनोपपीडम् में णमुल् (अम्) प्रत्यय।

(५) कुछ उपमाओं की पुनरावृत्ति

(६) कहीं-कहीं पर व्याकरण आदि की पारिभाषिक उपमाएँ। जैसे-
प्रकृतिप्रत्यययोरिवानुबन्धः (१३-१६) में व्याकरण-सम्बन्धी उपमा।

(७) सर्ग १ और १३ में वनेचर के द्वारा गूढ राजनीति और धर्मशास्त्र की चर्चा।

(८) आजघ्ने विषमविलोचनस्य वक्षः (१७-६२) में अपाणिनीय आत्मनेपद का प्रयोग

इस विषय में निम्नलिखित वक्तव्य है :-ऊपर जिन न्यूनताओं की चर्चा की गई है, उन्हें भारतीय आचार्यों ने न्यूनता में नहीं गिना है। भारवि संस्कृतसाहित्य में रीति-काव्य-परंपरा के जन्मदाता हैं, अतः ऐसे काव्यों में प्रतिभाप्रदर्शन, अलंकारों की बहुलता, श्रमसाध्य चित्रालंकारों का प्रयोग, पद-पद पर व्याकरण दर्शन आदि का पाण्डित्य-प्रदर्शन, कर्मवाच्य और भाववाच्य की प्रमुखता विशेष महत्त्वपूर्ण मानी गई है। अतएव माघ और श्रीहर्ष में इनका उत्तरोत्तर उत्कर्ष देखने को मिलता है। पाश्चात्य विद्वानों के लिए ये भले ही दुरूह, अरुचिकर, श्रमसाध्य और अत्यन्त अनुचित प्रतीत हों, भारतीय विद्वत्परंपरा इसको रुचिकर और ग्राह्य समझती है। विश्व के सभी कवियों में कतिपय भावों, विचारों, शब्दों और पदावली के प्रति विशेष अभिरुचि दृष्टिगोचर होती है, अतः इनकी पुनरावृत्ति ना देखने को मिलती है। भारवि का वनेचर कहने मात्र के लिए वनेचर था। वह प्रौढ़ विद्वान्, वर्णलिंगी और व्युत्पन्न व्यक्ति था। 'आजघ्ने' प्रयोग को भी 'भेत्तुम्' पद का अध्याहार करके शिष्ट माना गया है। (देखो सिद्धान्तकौमुदी सूत्र १-३-२८ की व्याख्या)।

(७) भारवि-विषयक प्रशस्तियाँ

प्रसिद्ध टीकाकार मल्लिनाथ ने भारवि की रचना की उपमा नारियल के फल से दी है जो ऊपर से कठोर, किन्तु अन्दर कोमल और सरस होता है। किरातार्जुनीय के प्रथम तीन सर्ग विशेष कठिन हैं, अतः उन्हें पाषाणत्रय कहा जाता है। आगे १५वें

सर्ग में चित्रकाव्य की रचना से विशेष क्लिष्टता आ गई है। अतः मल्लिनाथ का कथन है :

नारिकेलफलसंमितं वचो भारवेः सपदि तद् विभज्यते ।

स्वादयन्तु रसगर्भनिर्भरं सारमस्य रसिका यथेप्सितम् ॥

भारवि की सरस पदावली और अर्थगौरव ने कवियों का मार्ग-प्रदर्शन किया है, अतः कृष्ण कवि का कथन है :

प्रदेशवृत्त्याऽपि महान्तमर्थं प्रदर्शयन्ती रसमादधाना ।

सा भारवेः सत्पथदीपिकेव रम्या कृतिः कैरिव नोपजीव्या ॥

संस्कृत-साहित्य में भारवि रीति-काल का जन्मदाता है। उसे कविराज का समान प्राप्त हुआ है। उसने एक राजा के तुल्य रीति-सम्प्रदाय के लिए राजमार्ग प्रशस्त किया है।

वंशस्थवृत्तेन धृतातपत्रो वृत्तेन संदर्शितराजवृत्तिः ।

अर्थप्रकर्षाहृतराजलक्ष्मीर्नृपायते भारविरात्तकीर्तिः॥

(कपिलस्य)